Purva Mimaansa | Refereed | Peer Reviewed
ISSN: 0976-0237 | Volume 14, Issue March 2023 | Impact Factor 5.320

भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका: एक अध्ययन

सुरेन्द्र सिंह
एसोसियेट प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान विभाग, आर.के.एस.डी. कॉलेज, कैथल (हरियाणा)

सारांश

प्रतिनिधित्व लोकतांत्रिक व्यवस्था में सभी वर्गों की समान भागीदारी सुनिश्चित करना समय की मांग है ऐसा संभवत: इसलिए कि एक वर्ग को हाशिऐ पर रखकर न तो सम्पूर्ण विकास हो सकता है और न ही सामाजिक न्याय और राजनीतिक समानता को स्थापित किया जा सकता है। सभी को समान रूप से प्रतिनिधित्व प्रदान करना राजनीतिक सशक्तिकरण और लैंगिक समानता के लिए आवश्यक है। महिलाएं जो दुनिया की आबादी की लगभग आधी हैं, उन्हें राजनीतिक अधिकारों से वंचित करना सुनियोजित अत्याचार से कम नहीं है। वर्तमान समय की राजनीति व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी उस स्थिति में नहीं है जैसी स्वतन्त्रता के बाद के दशकों में थी। राजनीति दुनिया के इतिहास में एक दुर्जेय कार्य मानी जाती रही है, जिसने न केवल लोगों का शोषण किया है, बल्कि धर्म और लोगों के जीवन तथा संपत्ति की रक्षा के नाम पर खून बहाया है। इसलिए राजनीति न केवल आम आदमियों की बल्कि उन पुरुषों की भी बपोती रही है जो कठोर और क्रूर व्यवहार के लिए जाने जाते रहें हैं। परम्परागत रूप से राजनीति पुरुषों की प्रभुत्व शक्ति और इससे उत्पन्न होने वाले अहंकार के साथ सक्रिय रही है। इसलिए, सम्पूर्ण विश्व में राजनीति तुलनात्मक रूप से नरम स्वभाव की महिलाओं की भागीदारी के अनुकूल कभी नहीं रही है। राजनीति में महिलाएं और महिलाओं की राजनीति में भागीदारी न केवल भारत में बल्कि पूरे विश्व के इतिहास में एक अपवाद के रूप में रही है, जहां असमानता की जड़ों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। स्वतंत्रता के बाद से भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी में उत्तरोत्तर सुधार हुआ है। इसका मुख्य कारण भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार हैं, लैंगिक समानता के सिद्धांत को भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकारों, मौलिक कर्तव्यों और नीति निर्देशक सिद्धांतों में विस्तार से प्रस्तावित किया गया है। संविधान ने न केवल महिलाओं को समानता का दर्जा दिया है, बल्कि महिलाओं के पक्ष में भेदभाव को समाप्त करने के उपाय करने के लिए राज्य को सशक्त बनाया गया है। महिलाओं को सशक्त बनाना और उन्हें राजनीतिक समानता प्रदान करना आज की जरूरत भी है। महिलाओं आज किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं लेकिन अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं को अपने प्रभुत्व को स्थापित करने में अप्रत्याशित कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। आज बदलते संदर्भ में राजनीति के नए आयाम स्थापित किए जा रहे हैं जिसमें महिलाओं को समान रूप से प्रोत्साहित किया जा रहा है, भले ही वह पंचायती स्तर पर ही क्यों न हो। पंचायती राज संस्थाओं ने महिलाओं की राजनीति में अभिरूचि और उन्नति के नए द्वार खोले हैं। इस प्रकार राजनीतिक प्रतिनिधित्व में लैंगिक समानता की अनिवार्यता को रेखांकित करते हुए तथा इसे प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय और अंर्तराष्ट्रीय संवैधानिक नियमों, कानूनी दायित्वों को रेखांकित करते हुए भारतीय संविधान

PURVA MIMAANSA

की परिधि में महिलाओं की महत्ती भूमिका से इस शोध पत्र का मुख्य विषय रहा है। इसके अतिरिक्त स्वतंत्रता के बाद से भारत की संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में बदलाव पर चर्चा करना और राज्य विधानसभाओं, स्थानीय स्व-शासित निकायों में महिलाओं की संवैधानिक स्थिति को स्पष्ट करना है, साथ ही यह चुनावों और अन्य राजनीतिक गतिविधियों में मतदाताओं के रूप में महिलाओं की भागीदारी में तेजी से वृद्धि और संसद में महिला प्रतिनिधित्व की धीमी गति के बीच विरोधाभास का भी आलोचनात्मक विवेचन करता है। इसके अलावा यह शोध-पत्र उन संस्थागत और सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारकों की भी जांच करता है जो संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बाधित करते हैं। शोध पत्र में कुछ संस्थागत सुधारों की रूपरेखा भी बताई गई है, जो लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में सुधार कर सकते हैं। इस प्रकार इस शोध पत्र में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी, उनकी वर्तमान स्थिति, समस्याओं और राजनीतिक में उनके भविष्य का विस्तारपूर्वक अध्ययन बदलते राजनीतिक परिदृश्य के संदर्भ में किया गया है।

मुख्य शब्दः- भारत, संयुक्त राष्ट्र, दक्षिण एशिया, संविधान, संसद, लोकतांत्रिक राजनीति, महिलाएं।

भूमिका

लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी भारत ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व के इतिहास में उनकी जनसंख्या के अनुपात में कभी भी नहीं रही है। आधुनिक युग में राजशाही के पतन और लोकतांत्रिक संस्थाओं के उत्थान ने सेना और पुलिस बल के आधार पर शासन की अवधारणा का अंत कर दिया है, जिसके कारण आम जनता की राय को विशेष महत्व दिया जाने लगा है। पहले सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था पर समाज के कुछ एक शक्तिशाली लोगों का वर्चस्व था। समय के साथ आम जनता की लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में भागीदारी बढ़ने के कारण राजनीति में महिलाओं की भागीदारी भी बढ़ने लगी। महिलाओं की बढ़ती भागीदारी ने राजनीति की मूल प्रकृति को बदल दिया, जो लैंगिक समानता की ओर महत्वपूर्ण बदलाव का संकेत है। यह न केवल भारत के लिए बल्कि पूरे विश्व के लिए एक सकारात्मक पहल है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या राजनीतिक अधिकारों पर कुंडली मारकर बैठे पुरुषों का यह समूह दुनिया के राजनीतिक माहौल को तनाव मुक्त और समतामूलक बनाने के लिए राजनीति में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने को आगे कदम बढ़ाएगा? वास्तव में प्रतिनिधि लोकतंत्र राजनीति में महिलाओं के पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग करता है।[1] हालांकि पिछले कुछ दशकों में दुनिया भर में प्रतिनिधि सरकारें बढ़ी हैं, लेकिन महिलाओं की भागीदारी कम रही है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, 2022 के अंत तक संयुक्त राष्ट्र के 193 सदस्य देशों में से 28 देशों में राज्य और सरकार के प्रमुख के रूप में केवल 30 महिलाएं कार्यरत थीं।[2] यह हाल के दिनों में महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए किए गए कठोर प्रयासों के बावजूद है। विधायी प्रतिनिधित्व राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए मौलिक है, जो कानून बनाने की प्रक्रिया में भागीदारी को सक्षम बनाता है। शासन के विभिन्न पहलुओं पर बहस और चर्चाओं को बढ़ाने, सुशासन को स्थापित करने और

सरकार से जवाबदेही मांगने में विधायिकाएं बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह तभी संभव है जब सभी समुदायों और वर्गों का समान प्रतिनिधित्व हो। यह निर्विवाद सत्य है कि संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व संसदीय राजनीति में लैंगिक समानता की सीमा का एक प्रमुख संकेतक है। भारत 662.9 मिलियन महिला आबादी के साथ दुनिया का सबसे बड़ी और सबसे लचीली संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में से एक है।[3] यहां इस विषय पर विशेष बल दिया गया है कि आजादी के बाद से भारत की संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में सुधार कैसे हुआ है?

वैश्विक स्तर पर राजनीतिक व्यवस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी

सम्पूर्ण विश्व में महिलाओं की राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी कोई उत्साहवर्धक नहीं है। मई 2022 तक, राष्ट्रीय संसदों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व वैश्विक औसत का 26.2 प्रतिशत था (तालिका-1 देखें)। अमेरिका, यूरोप और उप-सहारा अफ्रीका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व वैश्विक औसत से ऊपर है; जबकि एशिया, प्रशांत क्षेत्र और मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका क्षेत्र में औसत से नीचे हैं[4] (तालिका 2 देखें)। एशिया महाद्वीप के भीतर भी महिलाओं का प्रतिनिधित्व भिन्न है और जहां तक दक्षिण एशियाई देशों का सवाल है तो अन्य एशियाई देशों की तुलना में स्थिति बद से बद्तर है (तालिका 2 देखें)। मई 2022 के आई.पी.यू के प्रतिवेदनों से पता चला है कि नेपाल में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 34 प्रतिशत, बांग्लादेश में 21 प्रतिशत, पाकिस्तान में 20 प्रतिशत, भूटान में 17 प्रतिशत और श्रीलंका में 5 प्रतिशत था।[5] भारत में संसद के निम्न सदन लोकसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 15 प्रतिशत से थोड़ा कम रहा है। इस अध्ययन में अफगानिस्तान शामिल नहीं है, लेकिन 2021 के विश्व बैंक के आंकड़ों में कहा गया है कि देश की पिछली संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 27 प्रतिशत था।[6]

तालिका-1[7]

संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का वैश्विक औसत

क्रम संख्या	विशिष्ट	निचला सदन और	उच्चसदन एक सदनीय	सभी सदन
1	सांसदों की कुल संख्या	37,248	7,062	44,310
2	पुरुष	27,425	5,255	32,680
3	महिलाएं	9,823	1,807	11,630
4	महिलाओं का प्रतिशत	26.4%	25.6%	26.2%

PURVA MIMAANSA

तालिका-2[8]

भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

क्रम संख्या	भौगोलिक क्षेत्र का नाम	प्रतिनिधित्व का प्रतिशत
1	**अमेरिका महाद्वीप**	**34.6**
	कैरेबियन	39.7
	उत्तरी अमेरिका	38.2
	दक्षिण अमेरिका	30.1
	मध्य अमेरिका	29.5
2	**उप-सहारा अफ्रीका**	**26.0**
	पूर्वी अफ्रीका	32.0
	दक्षिण अफ्रीका	31.8
	मध्य अफ्रीका	22.5
	पश्चिम अफ्रीका	16.9
3	**मध्य पूर्व और उत्तर अफ्रीका**	**16.8**
	मध्य पूर्व	17.1
	उत्तर अफ्रीका	16.4
4	**यूरोप**	**31.1**
	नार्डिक देश	44.7
	पश्चिमी यूरोप	35.2
	दक्षिण यूरोप	31.1
	मध्य और पूर्वी यूरोप	24.3
5	**एशिया**	**20.9**
	मध्य एशिया	26.1
	दक्षिण पूर्व एशिया	21.8
	पूर्वी एशिया	21.8
	दक्षिण एशिया	16.7
6	**प्रशांत क्षेत्र**	**20.9**
	आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड	42.2
	प्रशांत द्वीप	6.0

PURVA MIMAANSA

राजनीति में ऐतिहासिक लैंगिक असमानता

आबादी का आनुपातिक राजनीतिक प्रतिनिधित्व आधुनिक संवैधानिक लोकतंत्र का एक मौलिक लोकाचार है। वर्तमान में महिलाएं जो दुनिया की आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं, जो विकसित, अल्पविकसित और विकासशील देशों में ऐतिहासिक एवं राजनीतिक रूप से हाशिए पर हैं। 19वीं सदी के मध्य से, हालांकि, सामाजिक आंदोलनों ने व्यापक सुधारों को प्रभावित करने में सफलता प्राप्त की है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर ने महिलाओं के अधिकारों का समर्थन किया और हर प्रकार के लैंगिक भेदभाव का विरोध किया। वैश्विक स्तर पर लैंगिक समानता हेतु 1960 और 70 के दशक में अनेक नारीवादी और नव सामाजिक आंदोलनों हुए, जिनसे प्रभावित होकर 1979 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने ''महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन'' पर अभिसमय को अपनाया, जिसे महिलाओं के अधिकारों के सन्दर्भ में ''मिल का पत्थर'' माना जाता है। इस अभिसमय का अनुच्छेद–7 राजनीतिक और सार्वजनिक पद पर महिलाओं के अधिकार की पुष्टि करता है और समान भागीदारी का समर्थन करता है। इसके दो दशक बाद संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों ने सन् 2000 में सहस्राब्दी घोषणा पत्र को अपनाया तथा लक्ष्य प्राप्ति हेतु सन् 2015 तक आठ सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों (एम.डी.जी.) की रूपरेखा तैयार की, जिसमें लैंगिक समानता को बढ़ावा देना शामिल था। जनवरी 2016 में सतत विकास के लक्ष्यों को आगे बढ़ाया गया, जिनमें ''लैंगिक समानता प्राप्त करना और सभी महिलाओं और लड़कियों को सशक्त बनाना'' तथा ''नेतृत्व के सभी स्तरों जैसे राजनीतिक, आर्थिक और सार्वजनिक जीवन से संबन्धित निर्णय निर्माण में प्रभावी भागीदारी और समान अवसर सुनिश्चित करना'' सम्बन्धित प्रावधान किया गया।[9] महिलाओं की तार्किक और प्रभावी भूमिका का समर्थन कई विद्वानों ने भी किया है और अनेक राजनीतिक वैज्ञानिकों ने प्रतिनिधि संस्थाओं में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी के लाभों पर प्रकाश डाला है। ऐनी फिलिप्स ने कहा है कि ''महिलाएं राजनीति में विभिन्न कौशल लाती हैं और भविष्य की पीढ़ियों के लिए रोल मॉडल प्रदान करती हैं... वह लिंगों के बीच न्याय की अपील करती हैं और कहती है कि राजनीति में उनका समावेश राज्य की नीति में महिलाओं के विशिष्ट हितों के प्रतिनिधित्व की सुविधा प्रदान करता है और एक पुनर्जीवित लोकतंत्र जो प्रतिनिधित्व और भागीदारी के बीच की खाई को पाटता है के लिए स्थितियां बनाती है।[10] हन्ना पिटकिन कहती है कि ''राजनीतिक प्रतिनिधित्व के दो आयाम हैं – एक 'वर्णनात्मक' और दूसरा 'मूल' जहां 'वर्णनात्मक' में राजनीति का हिस्सा बनने वाले सभी समुदायों का 'सटीक' प्रतिनिधित्व शामिल है, और 'मूल' ऐसे प्रतिनिधित्व से मूर्त नीति परिणामों को संदर्भित करता है।[11] इमानुएला लोम्बार्डो और पेट्रा मायर ने तर्क दिया है कि ष्प्रतिनिधित्व का एक तीसरा रूप है– यानी, 'प्रतीकात्मक', जो न केवल 'दृश्य आयाम, प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है, बल्कि रूपकों और रूढ़ियों में पाया जाने वाला एक विवेकपूर्ण आयाम भी है।'[12] राजनीतिक प्रतिनिधित्व के सभी आयामों का संयोजन महिलाओं की लोकतांत्रिक व्यवस्था में भागीदारी और परिवर्तन सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका

महिलाओं की भागीदारी हमेशा से ही भारतीय राजनीति में विवाद का विषय रही है। अब प्रश्न

यह उठता है कि क्या वर्तमान राजनीति में महिलाओं की भागीदारी वैसी है जैसी तीस या चालीस साल पहले थी? अगर हम आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण करें तो पाएंगे कि आजादी के बाद महिलाओं की राजनीति में भागीदारी में बड़े पैमाने पर सुधार हुआ है। लैंगिक समानता भारतीय संविधान की मूल भावना में निहित है, जिसका वर्णन संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, मौलिक कर्तव्यों और राज्यनीति के निर्देशक सिद्धांतों में प्रस्तावित किया गया है। संविधान ने न केवल महिलाओं को समानता का दर्जा दिया है, बल्कि महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव के उपाय करने के लिए राज्य को सशक्त भी बनाया है। वर्तमान समय में महिलाओं को अपने प्रभुत्व को स्थापित करने में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। हालांकि, राजनीति के नए आयाम बनाए जा रहे हैं जिसमें महिलाओं को समान रूप से प्रोत्साहित किया जा रहा है, चाहे वह स्थानीय स्तर पर ही क्यों न हो। स्थानीय स्वशासन ने महिलाओं की उन्नति के नए द्वार खोले हैं। महिलाओं ने आज अपनी योग्यता और कार्यों से पुरुषों के समान अपने आपको साबित किया है और समाज की मुख्य धारा में अपने लिए सम्मानजनक स्थान बनाया है।

आधुनिक भारत के इतिहास और राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण है। रानी लक्ष्मीबाई, मैडम भीकाजी कामा, कस्तूरबा गांधी, अरुणा आसफ अली, सरोजिनी नायडू, सुचेता कृपलानी, विजयलक्ष्मी पंडित आदि ने हमारे स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्वाधीनता के बाद भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में इंदिरा गांधी, नंदिनी सत्पथी, मोहसिना किदवई, चंद्रावती, गिरिजा व्यास, सुषमा स्वराज, जयललिता, मायावती, यशोधरा राजे सिंधिया, वसुंधरा राजे सिंधिया, शीला दीक्षित, ममता बनर्जी, रेणुका चौधरी, सोनिया गांधी, मेनका गांधी आदि ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इंदिरा गांधी, जिसे 'आयरन लेडी' के नाम से भी जाना जाता है ने लगभग 16 वर्षों तक प्रधानमंत्री के रूप में देश का नेतृत्व किया। ऐसा इसलिए संभव हुआ कि देश के संविधान ने सभी महिलाओं को न केवल पुरुषों के समान वोट देने का अधिकार प्रदान किया, बल्कि पंचायत से संसद तक जनता का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुनाव लड़ने का अधिकार भी समान रूप से प्रदान किया।

इस प्रकार पंचायती राज व्यवस्था में सभी जनप्रतिनिधि स्तरों पर कम से कम एक तिहाई सदस्यता के साथ राजनीति में महिलाओं की भागीदारी का संख्यात्मक प्रतिनिधित्व बढ़ा है। इसके कारण समाज में पुरुषों और महिलाओं के मध्य समानता का विचार तेजी से बदल रहा है। महिलाओं में न केवल आत्मविश्वास पैदा हुआ है, बल्कि खुद के प्रति उनकी छवि में भी सुधार हुआ है। समाज में महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर जागरूकता बढ़ी है। लेकिन विडंबना यह है कि संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने हेतु कारगर अस्त्र 'महिला आरक्षण विधेयक' अभी भी पुरुष समाज की मानसिकता के कारण विधानपालिका से अनुमोदित नहीं हो सका है। आजादी के 75 वर्ष बाद भी राजनीतिक व्यवस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति कोई उत्साहवर्धक नहीं है। इसलिए राजनीतिक व्यवस्थाओं में समान भागीदारी की व्यवस्था होनी चाहिए, जिस हेतु सामाजिक सोच, प्रणालीगत बदलाव, सामाजिक विकास और सबसे अधिक शिक्षित और स्वस्थ वातावरण नितांत आवश्यक है। कागजों से बाहर निकल कर जमीनी स्तर पर भी, कुछ पहल करनी होगी जिसके लिए शिक्षित महिलाओं को आगे आना होगा। राजनीतिक-व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी का अध्ययन

हम दो आधारों पर कर सकते हैं।

अ) भारतीय संविधान के निर्माण में महिलाओं की भूमिका

हमारे स्वतंत्रता आंदोलन ने महिलाओं को राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन के केंद्र में ला दिया और स्थानीय, प्रांतीय और राष्ट्रीय स्तर पर सभी स्तरों पर महिला नेताओं का एक महत्वपूर्ण समूह तैयार किया। ये प्रबुद्ध महिलाएं ब्रिटिश भारत के तहत प्रांतीय विधायी निकायों में शामिल हुईं। उनमें से कुछ संविधान सभा की भी सदस्य बनी, जिसे प्रोफेसर ऑस्टिन ने 1787 में संयुक्त राज्य अमेरिका के फिलाडेल्फिया सम्मेलन के बाद सबसे महत्वपूर्ण घटना के रूप में वर्णित किया है। संविधान सभा के 389 सदस्यों में से केवल 15 महिलाएँ, जो केवल 4% हैं, भारतीय संविधान सभा की सदस्य थीं जो विभिन्न प्रकार के समूहों का प्रतिनिधित्व करती थीं, जिनकी सामाजिक और क्षेत्रीय पृष्ठभूमि अलग थीं। अम्मू स्वामीनाथन, दक्षिणायनी वेलायुधन, बेगम एजाज रसूल, दुर्गाबाई देशमुख, हंसा जीवराज मेहता, कमला चौधरी, लीला रॉय, मालती चौधरी, पूर्णिमा बनर्जी, राजकुमारी अमृत कौर, रेणुका रे, सरोजिनी नायडू, सुचेता कृपलानी, विजया लक्ष्मी पंडित और एनी मस्कारीन संविधान सभा की सदस्य थीं।

संविधान सभा में बहुत कम प्रतिनिधित्व के बावजूद इन महिला सदस्यों ने भारतीय संविधान की प्रकृति और सामग्री को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संविधान सभा की बहसें कई तरह से इन महिला प्रतिनिधियों के योगदान से आकार लेती थीं। चर्चा में उनका योगदान लगभग 2% था। 15 महिला सदस्यों में से 10 ने सर्वाधिक योगदान दिया। इस संबंध में आंकड़े इस प्रकार हैं- दुर्गाबाई देशमुख (22905 शब्द), बेगम एजाज रसूल (10480 शब्द), रेणुका रे (10312 शब्द), पूर्णिमा बनर्जी (9013 शब्द), दक्षिणायनी वेलायुधन (4415 शब्द), एनी मैस्करीन (2970) शब्द), सरोजिनी नायडू (2342 शब्द), हंसा जीवराज मेहता (1837 शब्द), विजया लक्ष्मी पंडित (1164 शब्द) और अम्मू स्वामीनाथन (1056 शब्द)। संविधान सभा की सबसे कम उम्र की सदस्य भी 34 साल की दक्षिणायनी वेलायुधन नाम की महिला थीं। दुर्गाबाई देशमुख एकमात्र महिला सदस्य थीं, जो अध्यक्ष के पैनल में थीं। हंसा जीवराज मेहता मौलिक अधिकार उप-समिति, सलाहकार समिति और प्रांतीय संवैधानिक समिति की सदस्य थीं। संविधान सभा में महिला सदस्यों द्वारा की गई चर्चा के विश्लेषण से पता चलता है कि वे औपनिवेशिक शासन के कारण भारत द्वारा झेली गई कठिनाइयों और भारतीयों, विशेष रूप से महिलाओं को उनके लिए संविधान में निहित अधिकारों का आनंद लेने के लिए उपलब्ध नए अवसरों से अवगत थीं। हाशिए के तबके के सशक्तिकरण को प्रभावित करने वाले सामाजिक मुद्दों को उनके द्वारा प्रमुखता से उठाया गया था। ये जबरन श्रम और मानव तस्करी की रोकथाम, शिक्षण संस्थानों में धार्मिक निर्देशों पर राज्य के नियंत्रण, अल्पसंख्यक अधिकारों, मौलिक अधिकारों के साथ बच्चों के शोषण के खिलाफ संरक्षण और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के मुद्दों पर अवधारणात्मक बहसें रही हैं। यह भी शिक्षाप्रद है कि किसी भी महिला सदस्य ने कभी भी सकारात्मक भेदभाव या लिंग या सांप्रदायिक आधार पर पृथक निर्वाचन जैसे उपायों का समर्थन नहीं किया, हालांकि वे समाज में व्याप्त लैंगिक अन्याय के बारे में पूरी तरह से जागरूक थीं। उनकी चिंता स्वतंत्र भारत में न्याय और समान अधिकार और प्रत्येक भारतीय की स्थिति थी।

महिला सदस्यों ने संविधान सभा में चर्चा को किस प्रकार प्रभावित किया था, इसकी कल्पना उनके भाषणों के विश्लेषण से की जा सकती है। इस संबंध में कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- सरोजिनी नायडू, संविधान सभा की पहली महिला अध्यक्ष, ने 11 दिसंबर 1946 को समावेशी संविधान सभा का आह्वान किया और डॉ. अम्बेडकर से संविधान सभा में शामिल होने का अनुरोध करते हुए उन्होंने कहा कि ''मैं उम्मीद कर रही हूं और मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर, जो आज इतने कड़वे हैं, जल्द ही संविधान सभा के सभी उद्देश्यों के सबसे प्रबल समर्थकों में से एक होंगे और उनके माध्यम से उनके लाखों अनुयायियों को यह एहसास होगा कि उनके हित उतने ही सुरक्षित हैं जितना कि अधिक विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के हित"। संविधान सभा के इतिहास और विचार-विमर्श ने उनकी धारणा में उन्हें बिल्कुल सही साबित किया है। अम्मू स्वामीनाथन ने कहा था कि ''समान अधिकार एक महान चीज है और यह उचित ही है कि इसे संविधान में शामिल किया गया है। बाहर के लोग कहते रहे हैं कि भारत ने अपनी महिलाओं को बराबरी का अधिकार नहीं दिया। अब हम कह सकते हैं कि जब भारतीय लोगों ने स्वयं अपना संविधान बनाया तो उन्होंने महिलाओं को देश के प्रत्येक नागरिक के बराबर अधिकार दिए। यह अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है और यह हमारी महिलाओं को न केवल अपनी जिम्मेदारियों का एहसास कराने में मदद करने वाली है बल्कि भारत को एक महान देश बनाने के लिए अपनी जिम्मेदारियों को पूरी तरह से निभाने के लिए आगे आने वाली है''। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारतीय महिलाएं न केवल समान स्थिति और अवसरों की इच्छा कर रही थीं बल्कि भारत को एक महान देश बनाने के लिए अपनी जिम्मेदारियों को भी निभा रही थीं। इस प्रकार भारतीय महिलाएं संविधान सभा की महिला सदस्यों की उन आकांक्षाओं को पूरा कर रही हैं, जो उन्हें भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त हैं।

ब) स्वतन्त्रता के बाद भारतीय लोकतंत्रिक व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी

भारत में महिलाओं की राजनीति में भागीदारी पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचनाओं और मानसिकता द्वारा निर्मित हाशिए के समाज के शोषण के इतिहास से प्रभावित रही हैं। 19वीं शताब्दी की शुरुआत में सामाजिक सुधार आंदोलनों ने महिलाओं की भलाई और सशक्तिकरण को आगे बढ़ाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। बंगाल में स्वदेशी से शुरू हुए भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भी महिलाओं की भागीदारी प्रभावशाली थी,[13] जिन्होंने न केवल राजनीतिक प्रदर्शनों का आयोजन किया और संसाधन जुटाए, बल्कि उन आंदोलनों का नेतृत्व भी किया।[14] स्वतंत्रता के बाद, भारतीय संविधान का भाग-3 जो राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में पुरुषों और महिलाओं के लिए समान स्थिति की गारंटी देता है तथा भाग-4 में प्रदत्त राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत पुरुष और महिला दोनों के लिए समान काम समान वेतन, काम की मानवीय स्थिति और महिलाओं को मातृत्व राहत प्रदान करके उनके आर्थिक सशक्तिकरण को सुनिश्चित करते हैं। इसके अलावा कोई भी भारतीय नागरिक जो मतदाता के रूप में पंजीकृत है और 25 वर्ष से अधिक का है, संसद के निचले सदन लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के लिए चुनाव लड़ सकता है; संसद के ऊपरी सदन राज्य सभा के लिए न्यूनतम आयु 30 वर्ष है। संविधान के अनुच्छेद 325 और 326 राजनीतिक समानता और मतदान के अधिकार की गारंटी

देते हैं।[15] इसके साथ-साथ संसद और विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण हेतु संविधान में संवैधानिक प्रावधान किए गए हैं। इसके विपरीत महिलाओं के लिए समान आरक्षित कोटा प्रदान करने के प्रस्ताव को संविधान का मसौदा तैयार करते समय खारिज कर दिया गया था। प्रमुख भारतीय महिला संघों और सत्तारूढ़ दल, कांग्रेस द्वारा इसका विरोध किया गया, जिनका मानना था कि महिलाओं को पुरुषों के समान स्तर पर निर्वाचित होने में सक्षम होना चाहिए।[16] बाद में, 1974 में, भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति की रिपोर्ट ने राजनीतिक संस्थानों में महिलाओं के अधिक प्रतिनिधित्व के लिए तर्क दिया और फिर से महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण के मुद्दे को सामने लाया गया।[17] इसके बाद संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों ने पंचायती राज संस्थाओं और नगर निकायों में महिलाओं के लिए कुल सीटों की एक तिहाई सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया और बाद के वर्षों में महिलाओं संबन्धित आरक्षण को कई राज्यों में 50 प्रतिशत तक बढ़ा दिया गया। इनका उद्देश्य जमीनी स्तर पर निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी में सुधार करना है। लेकिन संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण को विरोध का सामना करना पड़ा, और ऐसा कोई कानून अभी तक संसद से पारित नहीं हुआ है।[18] यहां यह महत्वपूर्ण है कि भारत सरकार और उसके अधीन कार्यरत संस्थाओं ने भी विवाह और रोजगार जैसे अनेक क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण की दिशा में कई कदम उठाए हैं। उदाहरण के लिए, सर्वोच्च न्यायालय ने न केवल महिलाओं को सम्पत्ति में अधिकार प्रदान किया, बल्कि सेना में भी महिला अधिकारियों को युद्ध के अलावा अन्य सभी सेवाओं में स्थायी कमीशन और कमांड पोस्टिंग का अधिकार उनकी सेवा की लंबाई के बावजूद प्रदान किया। यह एक क्रान्तिकारी कदम महिला सशक्तिकरण की दिशा में माना जाता है क्योंकि ये महिलाओं को काफी लम्बे समय और संघर्ष के बाद मिला।[19] भारत सरकार ने भी महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए हाल ही में, लड़कियों की शादी की न्यूनतम आयु 18 से बढ़ाकर 21 वर्ष कर दी गई।

इस प्रकार भारत जैसे देश में यह समय की मांग है कि मुख्यधारा की राजनीतिक गतिविधियों में समाज के सभी वर्गों की समान भागीदारी हो, इसलिए इसे बढ़ावा देने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए। सभी राजनीतिक दलों को एक आम सहमति पर पहुंचना होगा और महिला आरक्षण विधेयक को पारित करना सुनिश्चित करना होगा, जिसमें संसद और सभी राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित करने की बात कही गई है। लेकिन महत्वपूर्ण सवाल यह है कि राजनीति में महिलाओं की भागीदारी के कारण राजनीति की प्रकृति में क्या बदलाव होने की उम्मीद है। राजनीति जो हमारे जीवन के सभी पहलुओं जैसे अर्थव्यवस्था, शिक्षा, स्वास्थ्य, आंतरिक और बाहरी सुरक्षा आदि से संबंधित है। इसलिए यदि हमारे समाज की आधी आबादी यानी कि महिलाएं अगर उन फैसलों में शामिल नहीं हैं तो यह न तो समाज के हित में है और न ही महिलाओं के हित में। महिलाओं में जो स्नेह और रचनात्मकता निहित है, वह अहिंसा और शारीरिक बल के अहंकार से मुक्त है। इस कारण महिलाऐं संपूर्ण राजनीतिक व्यवहार को शांत, संतुलित और रचनात्मक बनाने में सहयोग कर सकतीं हैं। महिलाओं की बढ़ती भागीदारी से राजनीति में मनमानी, अतिवाद, अपराधीकरण और

भ्रष्टाचार कम हो सकता है। इसके अलावा समाज में बच्चों, लड़कियों और युवा महिलाओं के विकास पर अधिक ध्यान दिया जा सकेगा, उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार में सुधार होगा तथा पुरुषों और महिलाओं के बीच संबंधों में अधिक समानता और संतुलन बनेगा। राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि ने पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए विकास का एक नया चरण शुरू किया है, लेकिन यह तभी संभव होगा जब पुरुष वर्ग व्यापक सामाजिक और राजनीतिक हित में महिलाओं की भागीदारी पर गंभीर हो। इसके अलावा देश की महिलाओं को भी अपने राजनीतिक अधिकारों की समानता के लिए कड़ा संघर्ष करना चाहिए, क्योंकि अधिकार मांगने से नहीं मिलते, बल्कि छीनने पड़ते हैं।

निष्कर्ष

अंतत: कहा जा सकता है कि भारतीय संसदीय राजनीति में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी का बदलाव बहुत धीमा रहा है। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी में प्रगति को बाधित करने वाली गहरी संरचनात्मक बाधाओं को देखते हुए, संस्थागत परिवर्तन समावेशी राजनीति की शुरूआत कर सकता है, जो एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन होगा। महिलाओं के लिए बेहतर शैक्षिक अवसर, उनकी वित्तीय स्थिरता, सामाजिक पूर्वाग्रहों का अंत और मीडिया की जागरूकता ने राजनीतिक दलों को महिलाओं की भागीदारी के लिए मजबूर किया है। महिला मतदाताओं की संख्या बढ़ने के साथ, राजनीतिक दलों ने हाल के वर्षों में उनके चुनावी समर्थन की मांग करते हुए महिला समर्थक नीतियां भी बनाई हैं। जैसे-जैसे महिलाओं की राजनीतिक मुक्ति का आंदोलन गति पकड़ रहा है, राजनीतिक दलों और नागरिक समाज के भीतर महिला संगठनों को बड़े राजनीतिक और सामाजिक परिदृश्य में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में मदद मिली है। भारत की संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के अधिक प्रतिनिधित्व की दिशा में तत्काल संस्थागत सुधार को मजबूत करने के लिए महिलाओं को राजनीतिक लामबंदी को तेज करना चाहिए। शासन और नीति-निर्माण पर चर्चा को बदलने और भारत को वास्तव में समावेशी और प्रतिनिधि लोकतंत्र बनाने हेतु महिलाओं की अत्यधिक हिस्सेदारी की आवश्यकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सरकार और समाज ने भी काफी हद तक महिलाओं की राजनीति में समान भागीदारी की दिशा में ठोस और कारगर कदम उठाए हैं, जिसने महिलाओं के सम्मान और सशक्तिकरण ने राजनीति को एक नई ऊँचाई प्रदान की है।

सन्दर्भ

1. बार्बरा जे. नेल्सन और नजमा चौधरी (संपादित), *विमेन एण्ड पोलिटिक्स वर्ल्डवाइड,* रेल यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1994.
2. ''फैक्ट एण्ड फिगर: विमेन लिडरशिप एण्ड पोलिटिक्ल पार्टिसिपेंसन'' यूं एन विमेन।
3. ''जेंडर रेश्यो इन इंडिया'', स्टेटिस्टिक्स टाइम्स।
4. शान जन वार्स लियू, ''वेहर डू विमेन स्टेंड इन पोलिटिक्स? ए केस स्टडी ऑफ ईस्ट एण्ड साऊथईस्ट एशिया'', पालिटिकल साइंस एशोसिएसन ब्लॉग, 20 जनवरी, 2021.
5. आईपीयू पैरलिन, ग्लोबल डाटा आन नेशनल पार्लियामेंट, 2022.

6. ''परपोर्शन ऑफ सीट्स हेल्ड बाई विमेन इन नेशनल पार्लियामेंटस'', दा वर्ल्ड बैंक रिपोर्ट, 2021, एचटीटीपी एस://डाटा.वर्ल्डबैंक.ओआरजी/इंडिकेटर/एसजी.जीइएन.पर्ल.जेडएस.
7. आईपीयू पैरलिन, ग्लोबल डाटा आन नेशनल पार्लियामेंट, 2022.
8. आईपीयू पैरलिन, ग्लोबल डाटा आन नेशनल पार्लियामेंट, 2022.
9. ''सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स'', ब्यूरो फोर राइट्स बेस्ड डेवलपमेंट।
10. एने फिलिप्स, ''डेमोक्रेसी एण्ड रिप्रजेंटेशन – व्हाई सुड इट मैटर हूं अवर रिप्रजेंटेटिव्स आर?'', ए. फिलिप्स (सम्पादित), फेमनीज्म एण्ड पोलिटिक्स, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, आक्सफोर्ड, 1998. मैरी बीयर्ड, विमेन एण्ड पावर: ए मैनीफेस्टो, प्रोफाइल बुक्स, लंदन, 2017.
11. एचएफ पिटकिन, दि कंसेप्ट ऑफ रिप्रजेंटेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले, 1967, पेज 18.
12. एमनुएला लोमबार्डो और पैट्रा मित्र (सम्पादित), दि सिम्बोलिक रिप्रजेंटेशन ऑफ जेंडर: ए डिस्क्रिसिव अप्रोच, रूथलैड, लंदन, 2014.
13. जानकी नायर, विमेन एण्ड ला इन कोलोनियल इंडिया: ए सोशल हिस्ट्री, नई दिल्ली, 1996.
14. राधा कुमार, दि हिस्ट्री ऑफ डूंइग: एन इलूस्टेर्टिड अकाउंट ऑफ मूवमेंटस बार विमेंस राइट्स एण्ड फेमनीज्म इन इंडिया 1800–1990, कली फोर विमेन, नई दिल्ली, 1997.
15. मारजू रामा चेरै, ''विमेन एण्ड पोलिटिक्ल पार्टिसिपेंसन इन इंडिया: ए हिस्टोरिकल पर्सपेक्टिव'', इंडियन जर्नल ऑफ पालिटिकल साइंस, वोल्यूम 73, नम्बर 1, जनवरी–मार्च, 2012, पेज 119–132.
16. माला ह्यून, ''आज जेंडर लाईक अथनीसिटी? दि पोलिटिकल रिप्रजेंटेशन ऑफ आडिंटीटी ग्रुप्स'', पर्सपेक्टिव ऑन पोलिटिक्स, वोल्यूम–2, नंबर–3, 2004, पेज 439–458.
17. ''टुवार्डस इक्वलिटी: रिपोर्ट ऑफ दि कमेटी ऑन स्टेट्स ऑफ विमेन इन इंडिया'', मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन एण्ड सोशल वैलफेयर, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, न्यू दिल्ली, 1974.
18. प्रविन राई, ''विमेंस पार्टिसिपेंसन इन इलेक्ट्रौल पोलिटिक्स इन इंडिया'', साऊथ एशियन रिसर्च, वोल्यूम–37, नंबर–1, 2017, पेज 58–77.
19. संजय कुमार (संपादित), विमन वोटर्स इन इंडियन इलेक्शन: चेंजिंग ट्रेंड एण्ड अमर्जिंग पैटर्नस, रूथलैड, 2022, पेज–2.

PURVA MIMAANSA